शिवभक्त बाणासुर

दक्षप्रजापति की तेरह कन्याएँ कश्यप मुनि की पत्नियाँ थीं। वे सब-की-सब पतिव्रता तथा सुशीला थीं। उनमें दिति सबसे बड़ी थी, जिसके लड़के दैत्य कहलाते हैं। अन्य पत्नियों से देवता तथा चराचरसहित समस्त प्राणी पुत्ररूप से उत्पन्न हुए थे। ज्येष्ठ पत्नी दिति के गर्भ से सर्वप्रथम दो महाबली पुत्र पैदा हुए, उनमें हिरण्यकशिपु ज्येष्ठ था और उसके छोटे भाई का नाम हिरण्याक्ष था। हिरण्यकशिपु के चार पुत्र हुए। उन दैत्यश्रेष्ठों का क्रमशः ह्राद, अनुह्राद, संह्राद और प्रह्लाद नाम था। उनमें प्रह्लाद जितेन्द्रिय तथा महान् विष्णुभक्त हुए। उनका नाश करने के लिये कोई दैत्य समर्थ न हो सका। प्रह्लाद का पुत्र विरोचन हुआ, वह दानियों में सर्वश्रेष्ठ था। उसने विप्ररूप से याचना करनेवाले इन्द्र को अपना सिर ही दे डाला था। उसका पुत्र बलि हुआ। यह महादानी और शिवभक्त था। इसने वामनरूपधारी विष्णु को सारी पृथ्वी दान कर दी थी। बलि का औरस पुत्र बाण हुआ। वह शिवभक्त, मानी, उदार, बुद्धिमान्, सत्यप्रतिज्ञ और सहस्त्रों का दान करनेवाला था। उस असुरराज ने पूर्वकाल में त्रिलोकी को तथा त्रिलोकाधिपतियों को बलपूर्वक जीत कर शोणितपुर में अपनी राजधानी बनाया और वहीं रहकर राज्य करने लगा। उस समय देवगण शंकर की कृपा से उस शिवभक्त बाणासुर के किंकर के समान हो गये थे। उसके राज्य में देवताओं के अतिरिक्त और कोई प्रजा दुःखी नहीं थी। शत्रुधर्म का बर्ताव करनेवाले देवता शत्रुतावश ही कष्ट झेल रहे थे। एक समय वह महासुर अपनी सहस्त्रों भुजाओं से ताली बजाता हुआ ताण्डवनृत्य करके महेश्वर शिव को प्रसन्न करने की चेष्टा करने लगा। उसके उस नृत्य से भक्तवत्सल शंकर संतुष्ट हो गये। फिर उन्होंने परम प्रसन्न हो उसकी ओर कृपादृष्टि से देखा। भगवान् शंकर तो सम्पूर्ण लोकों के स्वामी, शरणागतवत्सल और भक्तवाञ्छाकल्पतरु ही ठहरे। उन्होंने बलिनन्दन महासुर बाण को वर देने की इच्छा प्रकट की।

बलिनन्दन महादैत्य बाण शिवभक्तों में श्रेष्ठ और परम बुद्धिमान् था। उसने परमेश्वर शंकर को प्रणाम करके उनकी स्तुति की और कहा-'प्रभो! आप मेरे रक्षक हो जाइये और पुत्रों तथा गणोंसहित मेरे नगर के अध्यक्ष बनकर सर्वथा प्रीति का निर्वाह करते हुए मेरे पास ही निवास कीजिये।

वह बलिपुत्र बाण निश्चय ही शिवजी की माया से मोह में पड़ गया था, इसलिये उसने मुक्ति प्रदान करनेवाले दुराराध्य महेश्वर को पाकर भी ऐसा वर माँगा। तब ऐश्वर्यशाली भक्तवत्सल शम्भु उसे वह वर देकर पुत्रों और गणों के साथ प्रेमपूर्वक वहीं निवास करने लगे। एक बार बाणासुर को बड़ा ही गर्व हो गया। उसने ताण्डवनृत्य करके शंकर को संतुष्ट किया। जब बाणासुर को यह ज्ञात हो गया कि पार्वतीवल्लभ शिव प्रसन्न हो गये हैं तब वह हाथ जोड़कर सिर झुकाये हुए बोला-'देवाधिदेव महादेव! आप समस्त देवताओं के शिरोमणि हैं। आपकी ही कृपा से मैं बली हुआ हूँ। अब आप मेरा उत्तम वचन सुनिये। देव! आपने जो मुझे एक हजार भुजाएँ प्रदान की हैं, ये तो अब मुझे महान् भारस्वरूप लग रही हैं; क्योंकि इस त्रिलोकी में मुझे आपके अतिरिक्त अपनी जोड़ का और कोई योद्धा ही नहीं मिला। इसलिये वृषध्वज! युद्ध

के बिना इन पर्वत-सरीखी सहस्त्रों भुजाओं को लेकर मैं क्या करूँ। मैं अपनी इन परिपुष्ट भुजाओं की खुजली मिटाने के लिये युद्ध की लालसा से नगरों तथा पर्वतों को चूर्ण करता हुआ दिग्गजों के पास गया; परंतु वे भी भयभीत होकर भाग खड़े हुए। मैंने यम को योद्धा, अग्निको महान् कार्य करनेवाला, वरुणको गौओं का पालनकर्ता गोपाल, कुबेर को गजाध्यक्ष, निर्ऋतिको सैरन्ध्री और इन्द्र को जीतकर सदा के लिये करद बना लिया है। महेश्वर! अब मुझे किसी ऐसे युद्ध के प्राप्त होने की बात बताइये, जिसमें मेरी ये भुजाएँ या तो शत्रुओं के हाथों छूटे हुए शस्त्रास्त्रों से जर्जर होकर गिर जायँ अथवा हजारों प्रकार से शत्रु की भुजाओं को ही गिरायें। यही मेरी अभिलाषा है, इसे पूर्ण करने की कृपा करें।'

उसकी बात सुनकर भक्तबाधापहारी तथा महामन्युस्वरूप रुद्र को कुछ क्रोध आ गया। तब वे महान् अद्भुत अट्टहास करके बोले-'अरे अभिमानी! सम्पूर्ण दैत्यों के कुल में नीच! तुझे सर्वथा धिक्कार है, धिक्कार है। तू बलि का पुत्र और मेरा भक्त है। तेरे लिये ऐसी बात कहना उचित नहीं है। अब तेरा दर्प चूर्ण होगा। तुझे शीघ्र ही मेरे समान बलवान् के साथ अकस्मात् महान् भीषण युद्ध प्राप्त होगा। उस संग्राम में तेरी ये पर्वत सरीखी भुजाएँ जलौनी लकड़ी की तरह शस्त्रास्त्रों से छिन्न-भिन्न होकर भूमि पर गिरेंगी। दुष्टात्मन्! तेरे आयुधागार पर स्थापित तेरा जो यह मनुष्य के सिरवाला मयूरध्वज फहरा रहा है, इसका जब वायु-भय के बिना ही पतन हो जायगा, तब तू अपने चित्त में समझ लेना कि वह महान् भयानक युद्ध आ पहुँचा है। उस समय तू घोर संग्राम का निश्चय करके अपनी सारी सेना के साथ वहाँ जाना। इस समय तू अपने महल को लौट जा; क्योंकि इसी में तेरा कल्याण है। दुर्मते! वहाँ तुझे प्रसिद्ध बड़े-बड़े उत्पात दिखायी देंगे।' यों कहकर गर्वहारी भक्तवत्सल भगवान् शंकर चुप हो गये।

यह सुनकर बाणासुर ने दिव्य पुष्पों की कलियों से अञ्जलि भरकर रुद्र की अभ्यर्चना की और फिर उन महादेव को प्रणाम करके वह अपने घर को लौट गया। तदनन्तर किसी समय दैववश उसका वह ध्वज अपने आप टूटकर गिर गया। यह देखकर बाणासुर हर्षित हो युद्ध के लिये उद्यत हो गया। वह अपने हृदय में विचार करने लगा कि कौन-सा युद्ध प्रेमी योद्धा किस देश से आयेगा, जो नाना प्रकार के शस्त्रास्त्रों का पारगामी विद्वान् होगा और मेरी सहस्त्रों भुजाओं को ईंधन की तरह काट डालेगा तथा मैं भी अपने अत्यन्त तीखे शस्त्रों से उसके सैकड़ों टुकड़ें कर डालूँगा। इसी समय शंकर की प्रेरणा से वह काल आ गया। एक दिन बाणासुर की कन्या ऊषा वैशाख मास में माधव की पूजा करके माङ्गलिक शृङ्गार से सुसज्जित हो रात के समय अपने गुप्त अन्तःपुर में सो रही थी, उसी समय वह स्त्रीभाव-(कामभाव) प्राप्त हो गयी। तब देवी पार्वती की शक्ति से ऊषा को स्वप्न में श्रीकृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध का मिलन प्राप्त हुआ। जागने पर वह व्याकुल हो गयी और उसने अपनी सखी चित्रलेखा से स्वप्न में मिले हुए उस पुरुष को ला देने के लिये कहा।

तब चित्रलेखा ने कहा-'देवि! तुमने स्वप्न में जिस पुरुष को देखा है, उसे भला, मैं कैसे ला सकती हूँ, जब कि मैं उसे जानती ही नहीं।' उसके यों कहने पर दैत्यकन्या ऊषा प्रेमान्ध होकर मरने

पर उतारू हो गयी, तब उस दिन उसकी उस सखी ने उसे बचाया। कुम्भाण्ड की पुत्री चित्रलेखा बड़ी बुद्धिमती थी, वह बाणतनया ऊषा से पुनः बोली।

चित्रलेखा ने कहा–सखी! जिस पुरुष ने तुम्हारे मन का अपहरण किया है, उसे बताओ तो सही। वह यदि त्रिलोकी में कही भी होगा तो मैं उसे लाऊँगी और तुम्हारा कष्ट दूर करूँगी।

यों कहकर चित्रलेखा ने वस्त्र के परदे पर देवताओं, दैत्यों, दानवों, गन्धर्वों, सिद्धों, नागों और यक्ष आदि के चित्र अङ्कित किये। फिर वह मनुष्यों का चित्र बनाने लगी। उनमें वृष्णिवंशियों का प्रकरण आरम्भ होने पर उसने शूर, वसुदेव, राम, कृष्ण और नरश्रेष्ठ प्रद्युम्न का चित्र बनाया। फिर जब उसने प्रद्युम्ननन्दन अनिरुद्ध का चित्र खींचा, तब उसे देखकर ऊषा लज्जित हो गयी। उसका मुख अवनत हो गया और हृदय हर्ष से परिपूर्ण हो गया।

ऊषा ने कहा–'सखी! रात में जो मेरे पास आया था और जिसने शीघ्र ही मेरे चित्तरूपी रत्न को चुरा लिया है, वह चोर पुरुष यही है।' तदनन्तर ऊषा के अनुरोध करने पर चित्रलेखा ज्येष्ठ कृष्ण चतुर्दशी को तीसरे पहर द्वारकापुरी पहुँचकर क्षणमात्र में ही पलंग पर बैठे हुए अनिरुद्ध को महल में से उठा लायी। वह दिव्य योगिनी थी। ऊषा अपने प्रियतम को पाकर प्रसन्न हो गयी। इधर अन्तःपुर के द्वार की रक्षा करनेवाले बेतधारी पहरेदारों ने चेष्टाओं से तथा अनुमान से इस बात को लक्ष्य कर लिया। उन्होंने एक दिव्य शरीरधारी, दर्शनीय, साहसी तथा समरप्रिय नवयुवक को कन्या के साथ दुःशीलता का आचरण करते हुए देख भी लिया। उसे देखकर कन्या के अन्तःपुर की रक्षा करनेवाले उन महाबली पुरुषों ने बलिपुत्र बाणासुर के पास जाकर सारी बातें निवेदन करते हुए कहा।

द्वारपाल बोले– देव! पता नहीं, आपके अन्तःपुर में बलपूर्वक प्रवेश करके कौन पुरुष छिपा हुआ है। वह इन्द्र तो नहीं है, जो वेष बदलकर आपकी कन्या का उपभोग कर रहा है? महाबाहु दानवराज! उसे यहाँ देखिये, देखिये और जैसा उचित समझिये वैसा कीजिये। इसमें हमलोगों का कोई दोष नहीं है।

द्वारपालों का वह वचन तथा कन्या के दूषित होने का कथन सुनकर महाबली दानवराज बाण आश्चर्यचकित हो गया। तदनन्तर वह कुपित होकर अन्तःपुर में जा पहुँचा। वहाँ उसने प्रथम अवस्था में वर्तमान दिव्य शरीरधारी अनिरुद्ध को देखा। उसे महान् आश्चर्य हुआ। फिर उसने उसका बल देखने के लिये दस हजार सैनिकों को भेजकर आज्ञा दी कि इसे मार डालो। सेना ने अनिरुद्ध पर आक्रमण किया। तब अनिरुद्ध ने बात–की–बात में दस हजार सैनिकों को काल के हवाले कर दिया। फिर तो असंख्य सेना–पर–सेना आने लगी और अनिरुद्ध उन्हें काल का ग्रास बनाने लगे। तदनन्तर उन्होंने बाणासुर का वध करने के लिये एक शक्ति हाथ में ली, जो कालग्नि के समान भयंकर थी। फिर उसी से रथ की बैठक में बैठे हुए बाणासुर पर प्रहार किया। उसकी गहरी चोट खाकर वीरवर बाण उसी क्षण घोड़ों सहित वहीं अन्तर्धान हो गया। फिर महावीर बलिपुत्र बाणासुर ने, जो महान् बल सम्पन्न तथा

शिवभक्त था, छलपूर्वक नागपाश से अनिरुद्ध को बाँध लिया। इस प्रकार उन्हें बाँधकर और पिंजरे में कैद करके वह युद्ध से उपराम हो गया। तत्पश्चात् बाण कुपित होकर महाबली सूतपुत्र से बोला–'घास–फूस से ढके हुए अगाध कुएँ में ढकेलकर इस पापी को मार डाल। अधिक क्या कहूँ, इसे सर्वथा मार ही डालना चाहिये।

उसकी यह बात सुनकर उत्तम मन्त्रियों में श्रेष्ठ धर्मबुद्धि निशाचर कुम्भाण्ड ने बाणासुर से कहा–'देव! थोड़ा विचार तो कीजिये। मेरी समझ से तो यह कर्म करना उचित नहीं प्रतीत होता; क्योंकि इसके मारे जाने पर अपना आत्मा ही आहत हो जायगा। पराक्रम में तो यह विष्णु के समान दीख रहा है। जान पड़ता है, आप पर कुपित होकर चन्द्रचूड़ ने अपने उत्तम तेज से इसे बढ़ा दिया है। साहस में यह शशिमौलि की समानता कर रहा है; क्योंकि इस अवस्था को पहुँच जाने पर भी यह पुरुषार्थ पर ही डटा हुआ है। यह ऐसा बली है कि यद्यपि नाग इसे बलपूर्वक डँस रहे हैं, तथापि यह हमलोगों को तृणवत् ही समझ रहा है।'

दानव कुम्भाण्ड राजनीति के ज्ञाताओं में श्रेष्ठ था। वह बाण से ऐसा कहकर फिर अनिरुद्ध से कहने लगा–'नराधम! अब तू वीरवर दैत्यराज की स्तुति कर और दीन वाणी से 'मैं हार गया' यों बारंबार कहकर उन्हें हाथ जोड़कर नमस्कार कर। ऐसा करने पर ही तू मुक्त हो सकता है, अन्यथा तुझे बन्धन आदि का कष्ट भोगना पड़ेगा।' उसकी बात सुनकर अनिरुद्ध उत्तर देते हुए बोले–'दुराचारी निशाचर! तुझे क्षत्रिय–धर्म का ज्ञान नहीं है। अरे! शूरवीर के लिये दीनता दिखाना और युद्ध से मुख मोड़कर भागना मरण से भी बढ़कर कष्टदायक होता है। मेरे विचार से तो विरुद्धाचरण काँटे की तरह चुभनेवाला होता है। वीरमानी क्षत्रिय के लिये रणभूमि में सदा सम्मुख लड़ते हुए मरना ही श्रेयस्कर है, भूमि पर पड़ कर हाथ जोड़े हुए दीन की तरह मरना कदापि नहीं।

इस प्रकार अनिरुद्ध ने बहुत–सी वीरता की बातें कहीं, जिन्हें सुनकर बाणासुर को महान् विस्मय हुआ और उसे क्रोध भी आया। उसी समय समस्त वीरों के, अनिरुद्ध के और मन्त्री कुम्भाण्ड के सुनते–सुनते बाणासुर के आश्वासनार्थ आकाशवाणी हुई।

आकाशवाणी ने कहा–महाबली बाण! तुम बलि के पुत्र हो, अतः थोड़ा विचार तो करो। परम बुद्धिमान् शिवभक्त! तुम्हारे लिये क्रोध करना उचित नहीं है। शिव समस्त प्राणियों के ईश्वर, कर्मों के साक्षी और परमेश्वर हैं। यह सारा चराचर जगत् उन्हीं के अधीन है। वे ही सदा रजोगुण, सत्त्वगुण और तमोगुण का आश्रय लेकर ब्रह्मा, विष्णु और रुद्ररूप से लोकों की सृष्टि, भरण–पोषण और संहार करते हैं। वे सर्वान्तर्यामी, सर्वेश्वर, सबके प्रेरक, सर्वश्रेष्ठ, विकाररहित, अविनाशी, नित्य और मायाधीश होने पर भी निर्गुण हैं। बलि के श्रेष्ठ पुत्र! उनकी इच्छा से निर्बल को भी बलवान् समझना चाहिये। महामते! मन में यों विचारकर स्वस्थ हो जाओ। नाना प्रकार की लीलाओं के रचने में निपुण भक्तवत्सल भगवान् शंकर गर्व को मिटा देनेवाले हैं। वे इस समय तुम्हारे गर्व को चूर कर देंगे।

इतना कहकर आकाशवाणी बंद हो गयी। तब उसके वचन को मानकर बाणासुर ने अनिरुद्ध का वध करने का विचार छोड़ दिया। तदनन्तर विषैले नागों के पाश से बँधे हुए अनिरुद्ध उसी क्षण दुर्गा का स्मरण करने लगे।

अनिरुद्ध ने कहा – शरणागतवत्सले! आप यश प्रदान करनेवाली हैं, आपका रोष बड़ा उग्र होता है। देवि! मैं नागपाश से बँधा हुआ हूँ और नागों की विषज्वाला से संतप्त हो रहा हूँ; अतः शीघ्र पधारिये और मेरी रक्षा कीजिये।

जब अनिरुद्ध ने पिसे हुए काले कोयले के समान कृष्णवर्णवाली काली को इस प्रकार संतुष्ट किया, तब ज्येष्ठ कृष्ण चतुर्दशी की महारात्रि में वहाँ प्रकट हुईं। उन्होंने उन सर्परूपी भयानक बाणों को भस्मसात् करके अपने बलिष्ठ मुक्कों के आघात से उस नाग – पञ्जर को विदीर्ण कर दिया। इस प्रकार दुर्गा ने अनिरुद्ध को बन्धनमुक्त करके उन्हें पुनः अन्तःपुर में पहुँचा दिया और स्वयं वहीं अन्तर्धान हो गयीं। इस प्रकार शिव की शक्तिस्वरूपा देवी की कृपा से अनिरुद्ध कष्ट से छूट गये, उनकी सारी व्यथा मिट गयी और वे सुखी हो गये। तदनन्तर प्रद्युम्ननन्दन अनिरुद्ध शिवशक्ति के प्रताप से विजयी हो अपनी प्रिया बाणतनया को पाकर परम हर्षित हुए और अपनी प्रियतमा उस ऊषा के साथ पूर्ववत् सुखपूर्वक विहार करने लगे। इधर पौत्र अनिरुद्ध के अदृश्य हो जाने तथा नारदजी के मुख से उसके बाणासुर के द्वारा नागपाश से बाँधे जाने का समाचार सुनकर बारह अक्षौहिणी सेना के साथ प्रद्युम्न आदि वीरों को साथ ले भगवान् श्रीकृष्ण ने शोणितपुर पर चढ़ाई कर दी। उधर भगवान् श्रीरुद्र भी अपने भक्त के पक्ष में सजधजकर आ डटे। फिर तो श्रीकृष्ण और श्रीशिव का बड़ा भयानक युद्ध हुआ। दोनों ओर से ज्वर छोड़े गये। अन्त में श्रीकृष्ण ने स्वयं श्रीरुद्र के पास आकर उनका स्तवन करके कहा – 'सर्वव्यापी शंकर! आप गुणों से निर्लिप्त होकर भी गुणों से ही गुणों को प्रकाशित करते हैं। गिरिशायी भूमन्! आप स्वप्रकाश हैं। जिनकी बुद्धि आपकी माया से मोहित हो गयी है, वे स्त्री, पुत्र, गृह आदि विषयों में आसक्त होकर दुःखसागर में डूबते – गिरते हैं। जो अजितेन्द्रिय पुरुष प्रारब्धवश इस मनुष्य जन्म को पाकर भी आप के चरणों में प्रेम नहीं करता, वह शोचनीय तथा आत्मवञ्चक है। भगवन्! आप गर्वहारी हैं, आपने ही तो इस गर्वीले बाण को शाप दिया था; अतः आपकी ही आज्ञा से मैं बाणासुर की भुजाओं का छेदन करने के लिये यहाँ आया हूँ। इसलिये महादेव! आप इस युद्ध से निवृत्त हो जाइये। प्रभो! मुझे बाण की भुजाओं को काटने के लिये आज्ञा प्रदान कीजिये, जिससे आपका शाप व्यर्थ न हो।'

महेश्वर ने कहा – तात! आपने ठीक ही कहा है कि मैंने ही इस दैत्यराज को शाप दिया है और मेरी ही आज्ञा से आप बाणासुर की भुजाएँ काटने के लिये यहाँ पधारे हैं; किन्तु रमानाथ! हरे! क्या करूँ, मैं तो सदा भक्तों के ही अधीन रहता हूँ। ऐसी दशा में वीर! मेरे देखते बाण की भुजाएँ कैसे काटी जा सकती हैं? इसलिये मेरी आज्ञा से आप पहले जृम्भणास्त्र द्वारा मुझे जृम्भित कर दीजिये, तत्पश्चात् अपना अभीष्ट कार्य सम्पन्न कीजिये और सुखी होइये।

शंकरजी के यों कहने पर शाङ्र्गपाणि श्रीहरि को महान् विस्मय हुआ। वे अपने युद्ध-स्थान पर आकर परम आनन्दित हुए। तदनन्तर नाना प्रकार के अस्त्रों के संचालन में निपुण श्रीहरि ने तुरंत ही अपने धनुष पर जृम्भणास्त्रका संधान करके उसे पिनाकपाणि शंकर पर छोड़ दिया। इस प्रकार श्रीकृष्ण जृम्भणास्त्र द्वारा जृम्भित हुए शंकर को मोह में डालकर खड्ग, गदा और ऋष्टि आदि से बाण की सेना का संहार करने लगे।

जब भगवान् रुद्र लीलावश पुत्रों तथा गणोंसहित सो गये, तब दैत्यराज बाण श्रीकृष्ण के साथ युद्ध करने के लिये प्रस्थित हुआ। उस समय कुम्भाण्ड उसके अश्वों की बागडोर सँभाले हुए था और नाना प्रकार के शस्त्रास्त्रों से सज्जित था। फिर वह महाबली बलिपुत्र भीषण युद्ध करने लगा। इस प्रकार उन दोनों में चिरकालतक बड़ा घोर संग्राम होता रहा; क्योंकि विष्णु के अवतार श्रीकृष्ण शिवरूप ही थे और उधर बलवान् बाणासुर उत्तम शिवभक्त था। तदनन्तर वीर्यवान् श्रीकृष्ण, जिन्हें शिव की आज्ञा से बल प्राप्त हो चुका था, चिरकाल-तक बाण के साथ यों युद्ध करके अत्यन्त कुपित हो उठे। तब शत्रुवीरों का संहार करनेवाले भगवान् श्रीकृष्ण ने शम्भु के आदेश से शीघ्र ही सुदर्शन चक्र द्वारा बाण की बहुत-सी भुजाओं को काट डाला। अन्त में उसकी अत्यन्त सुन्दर चार भुजाएँ ही अवशेष रह गयीं और शंकर की कृपा से शीघ्र ही उसकी व्यथा भी मिट गयी। जब बाण की स्मृति लुप्त हो गयी और वीरभाव को प्राप्त हुए श्रीकृष्ण उसका सिर काट लेने के लिये उद्यत हुए, तब शंकरजी मोहनिद्रा को त्यागकर उठ खड़े हुए और बोले-'देवकीनन्दन! आप तो सदा से मेरी आज्ञा का पालन करते आये हैं। भगवन्! मैंने पहले आपको जिस काम के लिये आज्ञा दी थी, वह तो आपने पूरा कर दिया। अब बाण का शिरश्छेदन मत कीजिये और सुदर्शन चक्र को लौटा लीजिये। मेरी आज्ञा से यह चक्र सदा मेरे भक्तों पर अमोघ रहा है। गोविन्द! मैंने पहले ही आपको युद्ध में अनिवार्य चक्र और जय प्रदान की थी, अब आप इस युद्ध से निवृत्त हो जाइये। लक्ष्मीश! पूर्वकाल में भी तो आपने मेरी आज्ञा के बिना दधीच, वीरवर रावण और तारकाक्ष आदि के पुरों पर चक्र का प्रयोग नहीं किया था। जनार्दन! आप तो योगीश्वर, साक्षात् परमात्मा और सम्पूर्ण प्राणियों के हित में रत रहनेवाले हैं। आप स्वयं ही अपने मन से विचार कीजिये। मैंने इसे वर दे रखा है कि तुझे मृत्यु का भय नहीं होगा। मेरा वह वचन सदा सत्य होना चाहिये। मैं आप पर परम प्रसन्न हूँ। हरे! बहुत दिन पूर्व यह गर्व से भरकर उन्मत्त हो उठा और अपने-आपको भूल गया था। तब अपनी भुजाएँ खुजलाता हुआ यह मेरे पास पहुँचा और बोला-'मेरे साथ युद्ध कीजिये।' तब मैंने इसे शाप देते हुए कहा-'थोड़े ही समय में तेरी भुजाओं का छेदन करनेवाला आयेगा। तब तेरा सारा गर्व गल जायगा।' (बाण की ओर देखकर) कहा-'मेरी ही आज्ञा से तेरी भुजाओं को काटनेवाले ये श्रीहरि आये हैं।' (फिर श्रीकृष्ण से) 'अब आप युद्ध बंद कर दीजिये और वर-वधू को साथ ले अपने घर को लौट जाइये।' यों कहकर महेश्वर ने उन दोनों में मित्रता करा दी और उनकी आज्ञा ले वे पुत्रों और गणों के साथ अपने निवास स्थान को चले गये।

शम्भु का कथन सुनकर अक्षत शरीरवाले श्रीकृष्ण ने सुदर्शन को लौटा लिया और विजयश्री से सुशोभित हो वे बाणासुर के अन्तःपुर में पधारे। वहाँ उन्होंने ऊषासहित अनिरुद्ध को आश्वासन दिया और बाण द्वारा दिये गये अनेक प्रकार के रत्नसमूहों को ग्रहण किया। ऊषा की सखी परम योगिनी चित्रलेखा को पाकर तो श्रीकृष्ण को महान् हर्ष हुआ। इस प्रकार शिव के आदेशानुसार जब उनका सारा कार्य पूर्ण हो गया, तब वे श्रीहरि हृदय से शंकर को प्रणाम कर और बलिपुत्र बाणासुर की आज्ञा ले परिवारसमेत अपनी पुरी को लौट गये। द्वारका में पहुँचकर उन्होंने गरुड़ को विदा कर दिया। फिर हर्षपूर्वक मित्रों से मिले और स्वेच्छानुसार आचरण करने लगे।

इधर नन्दीश्वर ने बाणासुर को समझाकर यह कहा– 'भक्तशार्दूल! तुम बारंबार शिवजी का स्मरण करो। वे भक्तों पर अनुकम्पा करनेवाले हैं, अतः उन आदि गुरु शंकर में मन समाहित करके नित्य उनका महोत्सव करो।' तब द्वेषरहित हुआ महामनस्वी बाण नन्दी के कहने से धैर्य धारण करके तुरंत ही शिवस्थान को गया। वहाँ पहुँचकर उसने नाना प्रकार के स्तोत्रों द्वारा शिवजी की स्तुति की और उन्हें प्रणाम किया। फिर वह पादों से ठुमकी लगाते हुए और हाथों को घुमाते हुए नाना प्रकार के आलीढ और प्रत्यालीढ आदि प्रमुख स्थानकों द्वारा सुशोभित नृत्यों में प्रधान ताण्डव नृत्य करने लगा। उस समय वह हजारों प्रकार से मुखद्वारा बाजा बजा रहा था और बीच–बीच में भौंहों को मटकाकर तथा सिर को कँपाकर सहस्रों प्रकार के भाव भी प्रकट करता जाता था। इस प्रकार नृत्य में मस्त हुए महाभक्त बाणासुर ने महान् नृत्य करके नतमस्तक हो त्रिशूलधारी चन्द्रशेखर भगवान् रुद्र को प्रसन्न कर लिया। तब नाच–गान के प्रेमी भक्तवत्सल भगवान् हर हर्षित होकर बाण से बोले– 'बलिपुत्र प्यारे बाण! तेरे नृत्य से मैं संतुष्ट हो गया हूँ, अतः दैत्येन्द्र! तेरे मन में जो अभिलाषा हो, उसके अनुरूप वर माँग ले।'

शम्भु की बात सुनकर दैत्यराज बाण ने इस प्रकार वर माँगा– 'मेरे घाव भर जायँ, बाहुयुद्ध की क्षमता बनी रहे, मुझे अक्षय गणनायकत्व प्राप्त हो, शोणितपुर में ऊषापुत्र अर्थात् मेरे दौहित्र का राज्य हो, देवताओं से तथा विशेष करके विष्णु से मेरा वैरभाव मिट जाय, मुझमें रजोगुण और तमोगुण से युक्त दूषित दैत्यभाव का पुनः उदय न हो, मुझमें सदा निर्विकार शम्भु–भक्ति बनी रहे और शिवभक्तों पर मेरा स्नेह और समस्त प्राणियों पर दयाभाव रहे।' यों शम्भु से वरदान माँगकर बलिपुत्र महासुर बाण अञ्जलि बाँधे रुद्र की स्तुति करने लगा। उस समय उसके नेत्रों में प्रेम के आँसू छलक आये थे। तदनन्तर, जिसके सारे अङ्ग प्रेम से प्रफुल्लित हो उठे थे, वह बलिनन्दन बाणासुर महेश्वर को प्रणाम करके मौन हो गया। अपने भक्त बाण की प्रार्थना सुनकर भगवान् शंकर 'तुझे सब कुछ प्राप्त हो जायगा' यों कहकर वहीं अन्तर्धान हो गये। तब शम्भु की कृपा से महाकालत्व को प्राप्त हुआ रुद्र का अनुचर बाण परमानन्द में निमग्न हो गया।

(उपर्युक्त कथा गीताप्रेस, गोरखपुर द्वारा प्रकाशित संक्षिप्त शिवपुराण की रुद्रसंहिता, युद्धखण्ड, के अध्याय 51–56 से ली गयी है।)

❀❀❀❀❀❀